श्रीमद्उत्तराध्ययन - सूत्र में कथा-शिल्प

(श्रमणसंघीय साध्वी डॉ. सुशीलाजी जैन "शशि')
(शिष्या श्री ज्ञानवतीजी म.)

भाषा-शास्त्रियों के मतानुसार "जिन-सूत्रों" में सर्वाधिक प्राचीन-भाषा के तीन सूत्र माने गए हैं। प्रथम - आचारांग द्वितीय सूत्रकृतांग एवं तृतीय-उत्तराध्ययन सूत्र। अन्य आगम सूत्रों में किसी विशिष्ट विषय का प्रतिपादन हुआ है, किन्तु उत्तराध्ययन सूत्र मे विविध विषयों का समावेश है। (इसमें धर्मकथा, उपदेश, तत्त्वचर्चा का सुन्दर समीक्षण है।)

इस पद्य-ग्रंथ के ३६ अध्याय हैं, जिनमें मुख्यत: यम-नियमों का सुन्दर निरूपण है, साथ ही आत्म-गुणों की ओर प्रेरित करने वाले प्रेरणाशील भावपूर्ण कथानकों का समावेश भी हुआ है। उत्तराध्ययन सूत्र का कथा-शिल्प स्वर्णजड़ित हीरकमणि की भाँति आलोकित है। इस सूत्र के ३६ अध्ययनों में चौदह अध्याय धर्म कथात्मक हैं। अत: इसे धर्मकथानुयोग में लिया गया है। इस सूत्र में वर्णित कथा-शिल्प को उभारने में मैने विस्तृत शैली न अपनाकर अति संक्षिप्त शैली अपनाई है; जो लघु-शोध-निबंध के लिए उपयोगी है।

उत्तराध्ययन सूत्र के आठवें अध्ययन "काविलीयं" में लोभ की अभिवृद्धि का सजीव चित्रण हुआ है। द्रौपदी के चीर की भाँति वृद्धि पाने वाला यह लोभ सद्गुणों का नाशक सिद्ध हुआ है, और कपिल केवली का कथानक इसी भूमिका पर उतरा है किन्तु लोभ से लिप्त कपिल के अन्तर्मानस में कुछ इस प्रकार परिवर्तन हुआ कि उसका मन विरक्त हो गया। विरक्त-मन गृहस्थ में निर्ग्रंथ बन गया। इसी अध्ययन में कपिल केवली के द्वारा साधुओं के प्रति एक विशिष्ट उद्बोधन है। पूर्वजन्म के वृत्तान्त के साथ सूक्ष्म अहिंसा का भी सुन्दर प्रतिपादन हुआ है।

नवमाँ अध्ययन 'नमि राजर्षि' से सम्बन्धित है, जो कि रागी से वैरागी बन जाते हैं। संयम-साधना के पथ पर बढ़ते उन क्षणों में परीक्षा हेतु ब्राह्मणवेश में इन्द्र देव प्रस्तुत होते हैं। उनके मध्य होने वाले पारस्परिक संवाद यथार्थ के धरातल पर उतर आए हैं। इस अध्याय से 'नमिराजर्षि' के साथ तात्त्विक प्रश्नोत्तर और उनका सुंदर समाधान हुआ है।

बारहवें अध्याय में 'हरिकेशबलऋषि' का कथानक है। उनका जन्म चाण्डाल कुल में हुआ था, किन्तु तप के दिव्य प्रभाव से वे सर्व वन्दनीय बन गए। इस अध्ययन से जातिवाद का खण्डन परिलक्षित होता है।

तेरहवाँ अध्याय 'चित्त सम्भूति' को लेकर चलता है। यह अध्याय त्याग-वैराग्य की प्रवाहित विमल-धारा के साथ पुनर्जन्म को सिद्ध करता है।

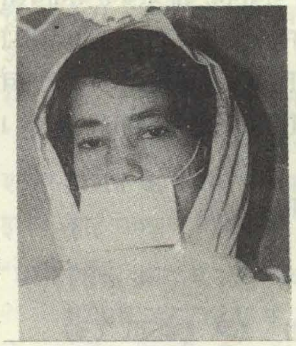

साध्वी डॉ. सुशीलाजी जैन 'शशि'

चौदहवें अध्याय में 'इक्षुकार नृप' की कथा है। इसके अन्तर्गत जीवन की नश्वरता, संसार की असारता, मृत्यु की अविकलता, काम-भोगों की मोहकता एवं मूलत: आत्मा की नित्यता का विश्लेषण हुआ है।

अठारहवें अध्याय में 'राजा संयति' का वर्णन है, जो हिंसक से अहिंसक बन गए, जिनका शिकारी रूप शिरोमणि में परिवर्तित हो गया। साथ ही इसमें चक्रवर्ती एवं तीर्थंकर की अनुपम विभूति के धारक अनेक महापुरुषों का आत्मसिद्धि के लिये त्याग मार्ग पर अनुसरण का वृत्तांत एवं उनकी नामाव लीभी पाई जाती है।

उन्नीसवाँ अध्याय 'मृगापुत्र' के कथानक से जुड़ा हुआ है। इसमें माता और पुत्र के संवाद में तात्त्विक चर्चा के साथ जीवन की कठोरता उभरी है। साथ ही पुत्र का कर्त्तव्य, माता-पिता का वात्सल्य, नरक-वेदना का वर्णन एवं आदर्श त्याग की समुज्ज्वलता प्रकट हुई है।

बीसवें अध्याय में 'महानिर्ग्रन्थ अनाथी मुनि' का कथा वर्णन है। इसमें अनाथ और सनाथ की व्याख्या करते हुए चिन्तन गहन हो गया है। अशरण-भावना के साथ "कर्म का कर्त्ता और भोक्ता आत्मा ही है।" यह भी सुस्पष्ट होता है।

इक्कीसवें अध्याय में समुद्रपाल का वर्णन है। तप-त्याग एवं विरक्ति की त्रिवेणी के साथ इस अध्याय में समुद्रयात्रा का विशेष वर्णन हुआ है।

बावीसवाँ अध्याय नारी-शक्ति का ज्वलंत उदाहरण है। अंधक कुलगोत्रीय समुद्रविजय के पुत्र रथनेमि, प्रभु अरिष्टनेमि के लघु भ्राता थे। वे अपने भ्राता की होने वाली पत्नी राजमती के रूप लावण्य पर आसक्त होकर काम-याचना करते हैं, किन्तु साध्वी राजमती, मुनि रथनेमि को अनासक्ति का मार्ग समझाकर पुन: धर्म पर दृढ़ करती है। इस अध्याय की महत्त्वपूर्ण विशेषता यह रही है कि 'पथ भ्रष्ट पुरुष को नारी ने सत्पथ दिखलाया है। इस अध्ययन में नारी का नारायणी रूप उजागर हुआ है। नारी मात्र वासना की दासी नहीं, उपासना की देवी भी है। वह प्रेयसी ही नहीं, पुरुष के लिए पवित्र प्रेरणा भी है। नमिनाथ की कथा प्रथम बार इस सूत्र में वर्णित हुई है।

माया दुः खदा है सदा, माया करे विकार ।
जयन्तसेन संयम रख, फानी यह संसार ॥

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

तेइसवाँ अध्याय 'केशि-गौतम' की तात्त्विक-चर्चा पर आधारित है। इसमें भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के मुनि केशिश्रमण एवं भगवान महावीर के प्रमुख शिष्य गौतम स्वामी के ऐतिहासिक आध्यात्मिक संवाद है। प्रस्तुत अध्ययन में आत्म-विजय और मन पर अनुशासन के जो उपाय प्रदर्शित किए हैं, वे आधुनिक तनाव के युग में परम उपयोगी हैं।

उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित चतुर्दश कथानक की प्रत्येक कथावस्तु आसक्ति से अनासक्ति की ओर वृद्धिगत हुई है। मानव जीवन की श्रेष्ठता, श्रामण्य-जीवन की महत्ता, संसार की नश्वरता-अस्थिरता एवं आत्मस्वरूप के दृष्टिकोण पर ही समस्त कथावस्तु आधारित हुई है। जैसे :—

खणमेत्त सोक्खा, बहुकाल दुक्खा,
पगाम दुक्खा, अणिगाम सोक्खा ।
संसार मोक्खस्स विपक्खभूया,
खाणी अणत्थाण उ काम भोगा ॥[1] (अ. १४ गा. १३)

उत्तराध्ययन सूत्र की समस्त कथाएँ कथानक की दृष्टि से सुगठित हैं।

प्रायः कथाओं के पात्रों का केन्द्र-बिन्दु संसार की अनित्यता है। चारित्र का सौन्दर्य इसी अनित्यता पर जा टिका है। आत्मा ही सुखदुःख का कर्त्ता एवं विकर्त्ता है। आत्मा ही अपना मित्र और शत्रु है। इन भावों को व्यक्त करते हुए मुनि अनाथी, नृप श्रेणिक को सम्बोधित करते हुए कहते हैं।—

अप्पा कत्ता विकत्ताय, दुहाण य सुहाण य ।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय-सुपट्ठिओ ॥[2]
(उ.सू.अ. २०. गा. ३७)

एकान्त के क्षणों में रथनेमि ने राजमती के सौन्दर्य पर विमुग्ध होकर जब अपनी काम भावना को प्रस्तुत किया, तब ऐसे क्षणों में राजमती सम्भ्रान्त न होकर जाति, कुल एवं शील का रक्षण करते हुए रथनेमि को संयम में स्थिर रहने का सन्देश देती है:—

अहं च भोयरायस्स, तं च सि अन्धग वन्हिणो ।
मा कुले गन्धणा होमो, संजमं निहओ चरं ॥[3]
(उ.सू.अ. २२, गा. ४४)

राजमती के चरित्र का यह उज्ज्वलतम रूप है, इतना ही नहीं उसके उद्बोधन से रथनेमि का चरित्र भी विकास प्राप्त करता है।

उत्तराध्ययन सूत्र में कथानकों के साथ-२ संवादों की एक सुंदर श्रृंखला भी पाई जाती है। कथाओं के ये कथोपकथन सुन्दर एवं सात्त्विक भी हैं। नमिनाथ एवं राजमती का संवाद बुद्ध-ग्रंथ सूत्र-निपात की 'प्रत्येक बुद्ध' कथा के समानान्तर है।[4]

हरिकेषि व ब्राह्मण का संवाद धार्मिक-क्रिया एवं वृत्ति की ओर संकेत करता है। भृगु पुरोहित एवं उसके पुत्रों का संवाद श्रमण जीवन की महत्ता को उद्घाषित करता है। तेइसवें अध्ययन में भगवान पार्श्वनाथ एवं प्रभु महावीर के शिष्यों का संवाद-प्रसंग आकर्षक एवं महत्त्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ :—

२३ वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के शिष्य महामुनि केशीश्रमण, २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर के प्रथम शिष्य प्रज्ञामुनि इन्द्रभूति गौतम से कहते हैं:—

अणेगाणं सहस्साणं, मज्झ चिट्ठसि गोयमा ।
ते य ते अहि गच्छन्ति, कहं ते निज्जिया तुमे ?[5] (उ.सू.अ. २३ गा. ३५)

"गौतम ! अनेक सहस्र शत्रुओं के मध्य आप खड़े हैं। वे आपको जीतने के लिए तत्पर हैं, फिर आपने उनको कैसे जीत लिया ?"

प्रत्युत्तर में गौतम स्वामी कहते हैं—

एगे जिए जिया पंच, पंच जिए जिया दस ।
दसहा उ जिणिताणं, सव्व सत्रू जिणा महं ।[6]
(उ.सू.अ. २३ गा. ३६)

"महामुने ! जो एक को जीतता है, वह पाँच को जीत लेता है, और जो पाँच को जीतता है, वह दस को जीत लेता है। दसों को जीतकर मैंने सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्ति की है।"

उत्तराध्ययन सूत्र की भाषा-शैली पद्यात्मक है एवं अर्धमागधी भाषा के धरातल पर अवतरित हुई है। देशकाल से इसे अंग-सूत्र का उत्तरावर्ती माना है।

बिना उद्देश्य के कथानक का कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। इस दृष्टि से उत्तराध्ययन सूत्र में प्रस्तुत सभी कथानकों की मूल संवेदना भौतिकता के परिवेश में होती है, जिसका पर्यवसान अनासक्त भाव में होता है। समस्त कथाओं का केन्द्रीय विचार है— 'मनुष्य-जीवन दुःख से ओत-प्रोत है। आत्मा राग-द्वेष, विषय-कषाय से लिप्त है।" इन सबसे मुक्त होने के लिये अपने जीवन एवं चरित्र को शुद्ध तथा पवित्र बनाना ही एकमात्र चरम लक्ष्य है।

सन्दर्भ —

(१) उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय १४, गाथा १३
(२) उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय २०, गाथा ३७
(३) उत्तराध्ययन सूत्र, २२, गाथा ४४
(४) उत्तराध्ययन सूत्र -हिन्दी अनुवाद-परिचय पृष्ठ ३
(५) उत्तराध्ययन सूत्र अध्याय २३, गाथा ३६

मधुकर मौक्तिक

भाव वृद्धि के साथ ही भवस्थिति घटने लगती है। सूरज की प्रखर किरणों के कारण सरोवर का पानी खत्म हो जाता है और वह सूख जाता है, वैसे ही भाव सूर्य की प्रखर उष्णता से जन्म-मरण अर्थात् भवरूप तालाब सूख जाता है। जब भव का अंधेरा घटने लगता है, तब अंधकार भरा मार्ग प्रकाशमान होने लगता है।

माया देखत फंस गया, देह रूप कंकाल ।
जयन्तसेन जग में वह, रहा सदा कंगाल ॥

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org